धर्म



लेखक - वेद प्रकाश 'मुमुक्ष'

धर्म



लेखक - वेद प्रकाश 'मुमुक्ष'

ॐ वक्रतुण्डाय हुम् ।

प्रकाशक-
दिव्यलोक
खजनी , गोरखपुर -273212, उ०प्र०
मो० 9335730863 , 7275505780

मूल्य : रू० 20/

समर्पण
माँ स्व० राममूर्ति एवं पिता स्व० फूलचन्द

मुद्रक:अरूण आफसेट प्रिन्टर्स, दुर्गाबाड़ी,
गोरखपुर-273001, उ०प्र०
09838221244

★ **धर्म** ★

1. विचार
2. व्यवहार
3. संस्कार
4. संस्कृति

— श्री श्री 1008 जगदगुरु
श्री चंद्राचार्य जगन्नाथदास जी

★ **Survival of Man** ★

1. BODY (Ordinary Life)
2. MIND (Spiritual Life)
3. SOUL (Religious Life)
4. CONSCIOUSNESS (Divine Life)

— Sri Aurobindo

श्री चित्र गुप्तायै नमः। श्री धर्मराजयै नमः।



वेद प्रकाश श्रीवास्तव

धर्म क्या है ? अपनी बात---

सृष्टि में सभी प्राणी, सभी वस्तुयें सम्मिलित है सबका अपना अपना गुण कर्म स्वभाव होता है। उसे उसका धर्म कहते है। जिससे सभी अपना-अपना कार्य करते रहते है। गतिमान रहते है। थोड़ा बहुत परिवर्तन करके, उन्हें संस्कारित किया जा सकता है। यह परिवर्तन परिवर्धन उनकी संस्कृति का निर्माण करती है। सही मार्गदर्शन मिलने पर उर्ध्वगति होती है। गलत मार्गदर्शन मिलने पर अधोगति होती है। ध्यान रहे अधिक उथल-पुथल, अधोगति होने पर सृजेता स्वयं उन्हे ठीक कर देता है। देखें धर्माचार्य, मठाधीश, राजनीतिक श्रेष्ठ धर्म को फालो करने का आग्रह क्यो करते है? दुराग्रह क्यो रखते है? रहस्य क्या है? क्या वाकई धर्म पालन करके कौढ़ी से करोड़पति बना जा सकता है? सुख, आनन्द की प्राप्ति हो सकती है? धर्म और उसकी स्वतंत्रता क्या है? अच्छा-बुरा कर्म क्या है? क्या कर्म ही धर्म है? इसी बातों को लेकर धर्म शब्द की मीमांसा की गई है।

उपरोक्त तथ्यों के परीक्षण के पुर्व धर्म के कुछ नारों को देखते है ये कितने चित्ताकर्षक है,

1. धर्म की जय हो।

2. अधर्म का नाश हो।

3. प्राणियों में सद्भावना हों।

4. विश्व का कल्याण हो।

5. वंदे वेद मातरम।

6. वंदे विश्व मातरम।

7. जय माँ भवानी।

8. जय जगदीश हरे।

9. हर हर महादेव।

प्रथम दृष्टि में, ये नारे जो व्यासपीठ से बोले जाते हैं। अच्छे लगते है। ये नारे धर्म की व्याख्या करते है। धर्म की मिमांसा, विवेचना आवश्यक है। धर्म के नाम पर ठगी हो सकती है। भुलावा में रखा जा सकता है। दूसरें चिढ़ भी सकते है। सिरफिरे तो कुछ भी कर सकते है। सुन्दर, सत्य, शिव करने के लिए धर्म बना है तो सुकृति करे कौन रोकता है? किन्तु विकृति से बचे। धर्म क्या है? अधर्म क्या है? करणीय क्या है? अकरणीय क्या है? यह अवश्य ही जानने योग्य बात है। जिसने जान लिया, पहचान लिया, तदनुरूप व्यवहार किया, तो जीवन सफल है। अन्यथा पछतावा है। आइये, धर्म को जाने, उचित को ग्रहण करे, अनुचित को छोड़े, जीवन को सुन्दर समुन्नत बनाये। इसी दिशा में मैने सीधे – सीधे संवाद किया है।

मेरा आग्रह है जिसने धर्म को जान लिया, उसके लिए कुछ भी जानना शेष नही है और जिसनें धर्म को नही जाना सब कुछ जानकर भी जीवन उसका व्यर्थ है।

धर्म क्या है –जब तक व्यक्ति का कार्य/आचरण उसकी ईच्छा, स्व नियंत्रण, स्व नियमन से चलता है तब तक वह धर्म एवं नैतिक मूल्यों से शासित होता है। आगे यदि उस पर व्यक्तियों अथवा कानूनी परिधि में उसके कार्य/आचरण को लाया जाता है तो वह कानून से शासित होता है। अन्त में यदि वह किसी कार्य/आचरण पर पूर्णतः उसे करने पर तुल ही जाता है तो न तो धर्म उसे रोक पाता है और न तो कानून उसे रोक पाता

है यदि वह समर्थ है तो अपनी वाली कर लेता है फिर भी वहां पर उसे रोक सकता है तो मात्र उसका अन्त: करण, उसका आपा, उसकी आत्मा। इस प्रकार अन्त में पुन: वह धर्म के साथ हो लेता है।

प्रिय पाठको , ऐसा सम्भव है कि कहीं पर मैने गल्तियाँ की होगी। आप उसे सुधार कर, अपने अनुसार ठीक कर लेवे और मुझे क्षमा भी करे। और सहयोग भी करे।

दिनांक 20.10.2013
भूमिका लेखन स्थान–
वादकारी कक्ष,
दीवानी कचहरी, गोरखपुर

आपका सहधर्मी/मुमुक्ष
वेद प्रकाश श्रीवास्तव
मो. 9335730863
मो. 7275505780

हमारे सांस्कृतिक सूत्र

1	एक	ईश्वर
2	दो पक्ष	कृष्ण पक्ष, शुक्ल पक्ष
	दो समय	दिन, रात
3	तीन गुण	सत्, रज्, तम
	तीन काल	भूत, भविष्य, वर्तमान
4	चार वेद	ऋगवेद, अथर्वेद, यजुर्वेद, सामवेद
	चार नीति	साम, दाम, दण्ड, भेद
	चार पुरूषार्थ	धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष
	चार अन्त:करण	मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार
5	पंच देव	शिव, शक्ति, गणेश, विष्णु, सूर्य
6	षट दर्शन	वैशेषिक, न्याय, सांख्य, योग, मिमांसा, वेदान्त
	षट विकार	काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर
	षट स्वाद	कड़वा, नमकीन, खट्टा, मीठा, कसैला, खारा
7	सप्त ऋषि	विश्वामित्र, वशिष्ठ, कश्यप, भारद्वाज, गौतम, अत्री, जमदग्नि
	सप्त पुरी	अयोध्या, मथुरा, माया(हरिद्वार), काशी, कांची, अवन्तिका, उज्जैन

अनुक्रमणिका

१ ईश वंदना

ॐ मंगलं ॐकार मंगलं ।

गुरू मंगल, सर्वे साम मंगलम् ।।

२ गुरू वंदना

ब्रह्मानन्द, परम सुखदं, केवलं ज्ञानमुर्ति,

द्वदांतीतं, गगन सदृशं, तत्वमस्यादि लक्ष्यं।

एकं नित्यम् विमलं अचलं सर्वाधि साक्षी भूतं

भावातीतं त्रिगुणरहितं सदगुरू नमामि।

भावार्थः एकमात्र ईश्वर ही सद्गुरू है। अर्थात ईश्वर, दिव्य आनन्द, परमसुख ज्ञान की मूर्ति, द्वैत से परे, गगन के समान विशाल, वेद के महावाक्य "तत् त्वम असि" केवल वही एक, सनातन, निर्मल, अपरिवर्तनशील, बुद्धि की गति का साक्षी, मन की सभी स्थितियों से और सत्व, रजस और तम गुणों से परे स्वरूप होता है।

सह ना ववतु।

(अर्थात साथ–साथ रक्षा करे)

सह नै भुनवक्तु।

(अर्थात साथ साथ पालन–पोषण करे)

सह वीर्यं करवा वहै।

(अर्थात साथ–साथ बल प्रदान करे)

तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विशावहै।

(अर्थात हम दोनो की अध्ययन की हुई विद्या तेजस्वी हो, हम दोनो कभी द्वेश न करे)

भावार्थ – हे प्रभु,आचार्य–शिष्य साथ–साथ सुरक्षा, पालन–पोषण, बल–बुद्धि–विद्या प्राप्त करे और द्वेष न करे, इसी तरह परस्पर स्नेह सूत्र में वधें रहे। दोनो की भावनाओं का मिलन ही ज्ञान का सृजन है।

३ योग, व्यायाम, प्राणायाम

पतंजलि योग के आठ अंग है।

(1) यम (2) नियम (3) आसन (4) प्राणायाम

(5) प्रत्याहार (6) धारणा (7) साध्यान (8) समाधि

योग: चित्त वृत्ति निरोध:।

प्राणायाम

ॐ भूः, ॐ भुव, ॐ स्वः

ॐ म: ॐ जन: ॐ तप:।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्, भर्गो देवस्य धीमाहि,

धीयो यो नः प्रचोदयात।।

४ ध्यान

ध्यान का लक्ष्य है एकाग्रता,

भावचेतना का उर्ध्वगमन।

(1) ॐ ब्रहमणे नम: । ॐ गायत्री नम:।

अर्थात सृष्टिकर्ता व उनकी शक्ति ज्ञान को प्रणाम।

(2) ॐ विष्णवे नम:। ॐ लक्ष्मी नम:।

अर्थात पालकर्ता व उनकी शक्ति सम्पदा श्री को प्रणाम।

(3) ॐ नम: शिवाय। ॐ जगदम्बायै दुर्गादेव्यै नम:।

अर्थात कल्याणकर्ता संहारकर्ता व उनकी शक्ति काली को प्रणाम।

(4) ॐ विश्वेभ्या देवेभ्यो नम:। ॐ विश्वेभ्या भूतेभ्या नम:।

अर्थात सभी देवताओं को नमन:। सभी जीवों को नमन। सभी आत्माये परमात्मा का ही अंश है।

ध्यान का भावार्थ –परमात्मा अपने सभी स्वरूपों में वरणेय है। नाम, रूप, गुण, लीला, चारो स्वरूपो में उन्हे प्रणाम है। उनकी शक्तियों को नमन है।

५ जप

जप प्रक्रिया कषाय–कल्मशो–कुसंस्कारो को धोने के लिए की

जाती है और श्रेष्ठ संस्कारों की प्राप्ति के लिए की जाती है।

गायत्री महामंत्र

ॐ भू र्भुव स्वः, तत्सवितुर्वरेण्यं,

भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो नः प्रचोदयात्।

(ऋग्वेद 3/62/10, यजुर्वेद 3/35, सामवेद 1462)

भावार्थः उस प्राण स्वरूप (भुः) दुखनाशक (भुवः) सुखस्वरूप (स्वः) (अर्थात महाप्राण–प्रकृति–प्रकाशयुक्त) परमात्मा के देवो–तेजो वलय को हम अंतरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे अर्थात सत्य को धारण करें। (जीवन देवता साधना)

महामृत्युंजयमत्रं

ऊँ त्रयम्बकं यजामहे, सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्,

उर्वारुकमिव बन्धनान, मृत्युः मोक्षीय मां अमृतात्।

भावार्थः–त्रयम्बक अर्थात मृत्युजंय भगवान की प्रार्थना करते है कि मेरा जीवन सुगन्धित, सुपोषित, चरम विकसित होने के बाद, प्रभु मेरा शरीर छूटने पर मृत्यु से अमरत्व प्रदान करे।(अमरत्व देवता साधना)

६. सत्संकल्प/व्रत/जीवन वाक्य

लोक मंगल हो। प्राणियों में सद्भावना हो।

ॐ शुभानि वर्धन्ताम्। ॐ कल्याणम्।

ॐ स्वस्तिम् भवन्तों। ॐ श्रीः अस्तु।

सत्संकल्प धारण करें :–

(पर्व त्योहार पर व्रत तथा जन्म/ विवाह/ अन्त्येष्टि संस्कार पर व्रत)

1 मै ....(जीवन साधक नाम ले)

2 अमुक अवसर.....................(यथा नामकरण/विवाह दिवस/श्रद्धांजलि दिवस/नवरात्री–मातृशक्ति दिवस/ शिवरात्रि – पितृशक्ति दिवस/होली–हल्ला –उल्लास– आनन्दोत्सव पर्व..............................)
दिनांक..............दिवस.............स्थान.........................पर

3 भारत भूमि वासी करोड़ों देव, देवी तुल्य आत्माओं को साक्षी मानकर

4 संकल्प लेता हूँ कि.................

(क) सत्य धर्म की

(ख) शुभ कर्म की

(ग) सच्ची समृद्धि की

(घ) सभी की मुक्ति की

कार्यो में,

स्वयं अपने,

(च) मन

(छ) बुद्धि

(ज) विवेक

(झ) प्रतिभा

का उपयोग कर, श्रेष्ठ भारत, समृद्ध भारत के निर्माण में योगदान दूंगा।

हरि ऊँ तत्सत्। ऊँ शांति।

ऊँ धर्म समृद्धिरस्तु। ऊँ कर्म समृद्धिरस्तु।

ऊँ ज्ञान समृद्धिरस्तु। ॐ सर्वेभवन्तु सुखिनः।

दिनांक .... हस्ताक्षर.................

शांति पाठ

ओम द्यौः शान्ति, अन्तरिक्ष शान्ति।

पृथ्वी शान्ति, आपः शान्ति।

ओषधयः शान्ति, बनस्पतयः शान्ति।

विश्वे देवा शान्ति, ब्रहम् शान्ति,।

सर्वम् शान्ति, शान्तिरेव शान्ति,।

सा मा शान्तिरेधि।।

प्रथम अध्याय

धर्म क्षेत्र–सुखंम् शांति

(रेलिजन–राइट इन्व्वायमेन्ट एण्ड हैपिनेस)

(1) धर्म क्या है ? उसकी परिभाषा क्या हो ? उसका क्षेत्रा कैसा है ?

धर्म नियम है। इसके उपयोग और दुरूपयोग की सीमा रेखा खींचने के लिए इसे परिभाषित करना आवश्यक है। इसका क्षेत्र जीवन के विविध पहलुओं से जुड़ा अत्यन्त व्यापक है। परिभाषायें निम्न है।

(क) धर्म– (स्वभाव के रूप में) जन्मजात स्वभाव है। जीवन की गति निर्धारित करता है। जीवजगत की नियति है। जीवों का गुण है। (गुण :धर्म)

(ख) धर्म–(विचार के रूप में) धारण करने योग्य विचार है। जहां मानव का मानव से तथा मानव का प्रभु से संबन्धों को बताती है। (आत्मातत्वम् धारयामि धर्म) (मैन टू मैन एण्ड मैन टू गाड रिलेशन)

(ग) धर्म– (आचरण के रूप में) मानव का आचार है जहां आचारों में मात्र शिष्टाचार व सद्व्यवहार की प्रेरणा देता है। (धर्म मूलम् आचार)

(घ) धर्म– (स्वतः के निष्कर्ष रूप में) धर्म–कर्त्तव्यम्/अकर्तव्यम्। (डू एण्ड डोन्ट) कर्त्तव्य में सर्वहित के लिए स्वहित का त्याग भी है, सत्य का पालन, झूठ की वर्जना भी है। पर दुःख कातरता भी है। सच्चाईयों और अच्छाइयों के लिए जीने मरने का साहस भी है।

(ड़) धर्म (शास्त्रीय विचार रूप में)
धारको धर्मः। (भारद्वाज कर्म मीमांसा)
उदान्त लक्षणो अर्थो धर्मः। (जैमिनी कर्म मीमांसा)

(2) धर्म का उद्देश्य– सुखः–धर्म का उद्देश्य सुख प्राप्ति है। धर्म में पीड़ा निवारण है। पतन निवारण है। धर्म में सुख प्राप्ति है। आनन्द प्राप्ति है। धर्म धारणा परमात्मा तत्व है। धर्म में सांसारिकता का सार तत्व है।

(3) धर्म का तत्व – जीवनः– जीवन के प्रति आस्था, उत्साह और और परमात्मा में विश्वास मनुष्य को सदा सुखी बनाये रखते है। जीवन में

नैराश्य, धृणा क्रोध सदैव दु:ख देते है। साफ शब्दों में धर्म का तत्व सच्चे जीवन में है, लेकिन इसकी अनुभूति तभी हो सकेगी, जब हम दैहिक आसक्ति एवं भोग–विलास के आकर्षण से बाहर निकल सकेगे। मानव देह का जीवन अल्पकालिक है शेष योनि भोग योनि है। सुखद जीवन धर्म तत्व है।

(4) धर्म की धारणा – सत्य में :– धर्म निरपेक्ष, सापेक्ष, गतिमान सत्य है। सत्य के सिवा कुछ नही है। यह भी परम सत्य है कि धर्म की यथार्थता जड़ता में नही वरन् चैतन्यता में है। सत्यता की निकटता में है। राम नाम सत्य है। सत्य बोलो मुक्ति है। सृजेता की ''सत्य ही धर्म'' उसकी धरोहर है। जहां सत्य है, अंहिसा है, वही भगवान है। (गांधी जी) अनंत रूपों, गुणों वाले ईश्वर कण–कण में समाया, श्रेष्ठ आदर्शो, सच्चे जीवन का समन्वय है। जीवन जीने के लिए मिला है। मरने के लिए नही (सुभाष जी)
जीवन तो कुछ श्रेष्ठ करके दिखाने के लिए दिया गया है। श्रेष्ठता सत्य के मार्ग पर चलकर हासिल करे। सत्य ही धर्म है।

(5) धर्म का वास – अन्त: करण में:– धर्म अन्त:करण में स्थापित होता है। अन्त:करण जीव की आत्मा, आपा, अध्यात्म, आत्मा का विज्ञान है जिसमें धर्मनीति और उसकी हर उपनीति , हर चीज, भीतर से निकलती है। जहां आत्म नियंत्रण होता है। बाहरी नियन्त्रण नही होता है। राजदंड का भय नही होता है। समाज की भर्त्सना नही होती है। देवता तो होते है। देवता तो देते रहते है। मांगने की जरूरत नही। मानव ही धर्म का केन्द्रबिन्दु है और मानव, महामानव के भीतर से जो चीज निकलती है वो कितनी अच्छी है ? उसका नाम क्या है ? वो है शांति । वो है सुख। वो है आनन्द। धर्म की प्राप्ति में सुख मिलता है। अधर्म के अन्त में, आनन्द मिलता है। पुरूषार्थ की यही उपलब्धि है कि धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष मिल जाय। मानव अपने अन्त: करण की बात माने, अपने चरित्र में, चिंतन में, व्यवहार में, शुचिता–पवित्रता लाये तो धर्म की बात बन जाय।

(6) निष्कर्ष रूप मे धर्म–प्राकृतिक जीवन:– धर्म प्राकृतिक नियमों, परंपराओं, नैतिकताओं, मर्यादाओं का पालन, वर्जनाओं से बचने का नाम है (रेलिजन इज रिस्पेक्ट आफ नेचुरल लाज एण्ड जनरल मोरेलिटी

रिगार्डिग नेचुरल लाइफ)। भारतीय संविधान का मौलिक कर्तव्य व मौलिक अधिकार गरिमामय जीवन के उदाहरण है। प्राकृतिक जीवन क्या है? जीवन जीने की कला क्या है? धार्मिक जीवन क्या है? सबका उत्तर है कि जीवन को ऐसे जीयो कि जीवन का भरपूर आनन्द मिल सके। इसके लिए निज नियम बनाकर दिनचर्या को व्यवस्थित करें। यथा दिनचर्या में प्रातः काल जागरण, शोचाचार –6 बजे, योग–व्यायाम –6.30 बजे, स्नान–भोर संध्योपासन –7 बजे, पारिवारिक वार्तालाप –अतिथि सत्कार व नाश्ता–7.30 बजे सुबह, जीवनचर्या में शैक्षिक /आर्थिक/व्यावसायिक जो भी नियत कार्य है उसे प्रथम पाली – 8 बजे से 12 बजे दिन दोपहर तक दैनिक जीवनचर्या/जीविका को पूरा करे। विश्राम और भोजन–12 बजे से 2 बजे अपरान्ह के बीच करें। पुनश्च द्वितीय पाली में–2 बजे से 6 बजे सायं तक दैनिक जीवनचर्या/जीविका पूरा करे। पुनः संध्योपासन 7 बजे, सांय पारीवारिक वार्तालाप–अतिथि सत्कार–सामाजिक सरोकार व नाश्ता–7.30 बजे सायं। मनोरंजन टी०वी० दर्शन/स्वाध्याय/स्त्रोत पाठ–8 बजे रात्री और भोजन 9 बजे रात्री तथा विश्राम –10 बजे से 6 बजे सूर्योदय/भोर तक करे। कार्य करने के लिए 8 घंटे कम नही। विश्राम के लिए 8 घंटे कम नही। उपर वर्णित प्राकृतिक जीवन है। इसके जीने में भी ऐसी कला विकसित करे ऐसी स्टाइल अपनावे कि कही भी अज्ञानता न दिखे, अभाव न झलके, अन्याय न होवे, तो धार्मिक जीवन की झलकियाँ, मिल जावेगी। धार्मिक जीवन का अभिप्राय है कि नियत कार्यो की शुरूआत धर्म से हो, प्रभु स्मरण स्तुति, स्वस्तिवाचन, पुजन, भोग पाठ से हो, आगे के कार्यो में उनके दिशानिर्देशों का स्वतः पालन होता रहे। आत्म नियंत्रण में रहे। सेल्फ डिस्पिलीन मेनटेन करे। हर चीज के लिए सरकार संविधान/कानून डंडा नही कर सकता है। समाज पुरस्कार दण्ड हर जगह नही दे सकता है। किन्तु आप स्वयं धार्मिक सत्ता (भगवान का भय) का आवरण ओढ़ कर कार्यो को अंजाम देगें तो स्वयं आप सुखी और संसार सुखी होगा। धर्म क्षेत्र सुखम भवेति। सभी धर्मो में प्रार्थनाए होती है। शुभ की कामँनाए की जाती है। अशुभ से छूटकारे का निवेदन की जाती है।

ओम शुभानिवर्धन्ताम्। ऊँ कल्याणम्।

द्वितीय अध्याय

कर्म क्षेत्र पौरूषं. शुभम्

(वर्क कल्चर–राइट करेज, वर्क टू रूल)

(अथातो अधिकारः फलयुक्तानि कर्माणि–कल्पसूत्रम)

(1) कर्म क्या है? विभिन्न क्षेत्रो द्वारा उसे परिभाषित सीमित किया है अथवा उसकी स्वतंत्रता बरकरार है? उसका क्षेत्र कैसा है? (एक्शन/एक्ट/ऐक्टीविटी):–

कर्म कर्ता द्वारा सम्पन्न किया गया कार्य है। कार्य शारीरिक मानसिक, वाचिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, कलात्मक, वैज्ञानिक, साहित्यिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि अनेकानेक क्षेत्रों में हो सकते है। उन क्षेत्रों द्वारा उसे निश्चित अर्थो में परिभाषित किया गया है, ताकि वांछनीय और अवांछनीय कार्यो की सीमाओं को निर्धारित किया जा सके। कर्म करने की स्वतंत्रता है फिर भी जहां मानक है, मानदण्ड है, वहां उसी सीमा तक करना उचित होता है। वर्जनाओं से बचा जाता है। मर्यादाओं के अन्दर कार्य किया जाता है। सारा कानून कर्म के उपर ही बना है।

(2) कर्म करने की वर्जना और मर्यादा उसे करणीय और अकरणीय (डू एण्ड डोन्ट) बनाती है, कर्तव्यम/अकर्तव्यम जाने (रूल्स ऑफ गवर्नेस/पालिसी ऑफ सिविल सोसाइटी/पालिसी ऑफ परसन):–

प्रत्येक व्यक्ति जागने से लेकर सोने तक कुछ न कुछ करता रहता है। बिना कर्म किये जीवित रहना मुश्किल है। बिना कर्म किये, बिना पुरूषार्थ किये, कोई सिद्धि नही मिलती है। किन्तु कर्म करने में उश्रृंखलता, क्षति, उदण्डता, अशिष्टता बर्दाश्त नही, ये वर्जनाए है। अकर्मण्यता, अपकर्म, अपहानि बर्दाश्त नही, ये मर्यादाए है। इसी आधार पर कर्म की स्वतंत्रता, जहां तक है वहां तक, वह करणीय कर्म है और कर्म पर बंधन, जहां पर है वहां पर, वह अकरणीय कर्म है।

शास्त्रों में उम्रानुसार आश्रम, ब्रह्मचर्य– ग्रहस्थ– वानप्रस्थ–सन्यास नियत है क्योकि देह,कौमार्य–यौवन–जरा–नित्य/अनित्य है। इन अवस्थानुसार विभिन्न आश्रमों के कार्यो में विभिन्नताएं है। उन्हे करें, परन्तु साक्षी के रूप में, देह में स्थिति "प्राण"/"आत्मा"/"मै" तो स्थिर रहता है। स्थिति प्रज्ञ हो अर्थात बिना चंचलता (स्थिरता) बिना

लापरवाही (अर्थात प्रज्ञा) से कार्य करे। ऐसा धार्मिक अपेक्षाए है। विधिक वाछनीयता है। विधि के अनुसार यहां न्याय होता है। वहाँ विधाता न्यायकर्त्ता बैठा है।

3. पुरूष का अर्थ पुरूषार्थ है अर्थात धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष है। पुरूष की संरचना कैसी है? पुरूष बनाया ही जीने और मरने मात्र के लिए तो नही? (ह्यूमन एन्थोप्रोलोजी/ह्यूमनेटिक्स) :-

पुरूप का लक्ष्य पुरूषार्थ है। मानव की प्रकृति अप्टधा (आठ प्रकार की) है। मानव शरीर रचना व प्रकृति को समझते है। प्रकृति तो जीव का शरीर पंचतत्व और तीन गुणो से बनाती है, उसके बाद ब्रह्म का अंश जीव के रूप में शरीर में प्रवेश करके उसे जीवात्मा बनाता है।

(क) मानव का अन्त: शरीर रचना (ह्यूमन एनाटोमी):-

(प्रथमत:)- शरीर की पांच ज्ञानेन्द्रिया-पॉच अंगो की है यथा जीह्वा-आंख-कान-नाक-त्वचा। उनका कार्य अथवा विषय है रसे-रूपे-शब्दे-गन्धे-स्पर्शे (दुर्गा सप्तसती से उद्‌घृत)।

(द्वितीत:) शरीर की पांच कर्मेन्द्रिया-पॉच अंगो की है यथा हाथ-पैर-मुख-लिंग-गुदा। उनका कार्य अथवा विषय है काम करना-चलना-ग्रहण-मैथुन-विसर्जन।

(तृतीत:) और मन जो सबका अधिपति है, कुल ग्यारह इन्द्रिया हुई। इन्द्रियों के कार्य:- इन्द्रियों के प्रमुख चार कार्य अथवा विषय है-राज्य, भोग, विजय, सुख। सामूहिक रूप में इन्द्रियों की प्रमुख प्रेरणा शक्ति है- मन, बुद्रि, चित्त, अहंकार।

सामूहिक रूप में इन्द्रियो का प्रमुख चार लक्षण है-ज्ञान, विवेक, भक्ति (वैराग्य) कर्म (अनाशक्त) (गीता से उद्‌घृत)। संक्षेप में इन्द्रिया कर्म को करती है। इन्द्रिया कैसी हो? सार रूप में मन कल्पनाशील, मगन, प्रसन्नचित्त हो, मन के हारे हार है मन के जीते जीत है।

इन्द्रिय विषय (ह्यूमन साइकोलोजी):-

(एक) मन अथवा इन्द्रियो का पहला विषय "राज्य -सत्ता -सम्पत्ति" हेतु चेष्टा करना है धर्म, अधर्म करना है। मन सोचता है कि संग्राम करिष्यामि। न करिष्यामि। यही मन की हर्ष विषाद गति है)

(देखें – गीता–प्रथम अध्याय – हर्ष विषाद योग)

(दो) इन्द्रियों का दूसरा विषय "भोग" है। यही बुद्धि (विवेक) की, बुद्धि से संचालित सुकृति दुष्कृति गति है।
(देखें–गीता–द्वितीय अध्याय–सांख्य/बुद्धि योग)

(तीन) इन्द्रियों का तीसरा विषय "विजय" है। यही चित्त का कर्म योग गति है। (देखें गीता तृतीय अध्याय कर्म योग)

(चार) इन्द्रियों का चौथा विषय "सुख" है। यही अहंकार का ज्ञान–विज्ञान योग गति है। (देखें गीता सप्तम अध्याय ज्ञान–विज्ञान योग) सार रूप में इन्द्रिया सम्पत्ति, भोग, विजय, सुख चाहती है जो धर्म का भी विषय है। सर्वे भवन्तु सुखिनः।

(ख) मानव का वाह्य शरीर रचना (हयूमन फिजियोलोजी):– शरीर पाँच वस्तुओं से बनी है– अस्थि, मज्जा, मांश, रक्त, भेद (दुर्गा सप्तसती से उदधृत)। यह देह –कौमार, यौवन, जरा एवं नित्य/अनित्य (मरनशील) है। सार रूप में तो यह है कि तन सुन्दर पुष्ट गठित व प्राणवान हो। सर्वे सन्तु निरासया।

(ग) जीव का पर्यावरण/प्रकृति रचना (जियोग्राफिकल इन्वायरमेन्ट):– शरीर मूल तत्व रूप में भूमि, जल, आकाश, अग्नि, वायु तत्वों से बनता है। इसे पर्यावरण से प्राप्त करता है। इन्ही तत्वों के कमोवेश से उसकी प्रकृति बनती है। भूमि, आपो, अनलों, वायुः खँ (पौरूप) मन बुद्धि इव च अहंकार, इतीयं में भिन्ना प्रकृति अष्टधा (देखे –गीता–अध्याय सप्तम)। जीव वातावरण पाने पर उसकी अष्टधा (आठ प्रकार की) प्रकृति पनपती है। सार रूप में प्रकृति जीवट पौरूषवान, सौम्य, शालिन हो।

(4) कर्म कैसा हो? कर्म का क्षेत्र कैसा हो? पाप–पुण्य क्या है? (मारल कोड आफॅ कन्डक्ट/लॉ फार एक्शन):–

(एक) देवगुरू वृहस्पति–जीवन जीने का गुरूमंत्र है– स्नेह,

साहचार्य, शुद्धता (व्यवहार की शुचिता)।

(दो) दानवगुरू शुक्राचार्य–पुरूष की सार्थकता, पुरूपार्थ प्राप्ति में है। पुण्य और पाप तथा साम दाम दण्ड भेद तो बाद में देखो, पहले पुरूषार्थ दिखाओं। जीवन की समस्याओं के उत्तर न तो शस्त्र से, न तो शास्त्र से, बल्कि स्वयं के सोच विचार चिंतन मनन कर्म से मिलते है। कर्म का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है।

(तीन) दुखमूलक पाप का अर्थ है, अज्ञान,अभाव,अन्याय, यानि व्यक्ति का अपनी उच्चतम भलाई के विपरित कार्य करता है।

(चार) सुखमूलक पुण्य का अर्थ है– ज्ञान–शक्ति–न्याय, यानी व्यक्ति अपनी भलाई व श्रेष्ठता के लिए कार्य करता है।

(5) कर्म से सुख दुख कैसे मिलता है? (ह्यूमन पेनालोजी/डिवाइन पेनालाजी) :– सभी व्यक्ति प्रकृति से उत्पन्न हुए गुणों द्वारा स्वत: कर्म करते है।

(एक) कर्म करणीय अथवा अकरणीय हो सकता है। कर्तव्यम् अथवा अकर्त्तव्यम (डू आर डोन्ट) हो सकता है। विवेक से, शास्त्र से, विधान से निर्णय ले क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए।

(दो) ध्यान रहे कि पुरूपार्थ इसी में है कि काम–क्रोध, लोभ–मोह मद–मात्सर्य, ईष्या–दम्भ, राग–द्वेश, अकर्मण्या – अंकिचनता आदि दुर्गुणों से दूर रहे। दरिद्रता–सम्पन्नता, रूग्णता–स्वस्थता, बुद्धिमता –अबुद्धिमत्ता, न्याय– अन्याय सभी कुछ इस संसार में है। करने योग्य कर्तव्यों का प्रसन्नतापूर्वक पालन करे। इससे सुख मिलेगा। न करने योग्य अकर्तव्यों का दृढ़तापूर्वक परित्याग करें। इससे दुख मिटेगा।

(तीन) शांति, सफलता और सुख हेतु पूरे मन–बुद्धि चित्त–अहंकार (स्वाभिमान) अर्थात मनोचतुष्ट का समन्वय करने से और परिश्रम बढ़ाने से व्यक्ति

सफल होता है।

(चार) सफलता, बुद्धि, श्रम, साधन के संयोग से मिलता है। किन्तु सदा सेवा, साधना, सहजता, सौम्यता बनाये रखे। दुख की पिछली रजनी बीच निकलता सुख का नवल प्रभात/संसार में सुख, दुख, हानि, लाभ जीवन मरण, विधाता के हाथ में है।

(6) शुभ, अशुभ कर्म क्या है? पुरूषार्थ कहाँ लगे?(व्हेदर रांग,व्हेदर राइट, व्हाट इनरजेटिक मैन कैन डू) :-

शुभ कार्य करे, अशुभ कार्य न करे। विवेक से, ज्ञान से, शास्त्र से विधान से निर्णय ले, क्या शुभ होगा, क्या अशुभ होगा।

(एक) ज्ञान हमे सत्य का, शुभाशुभ का बोध कराता है। ज्ञान आत्मा का मौलिक गुण है, उसे प्रकट करने के लिए शास्त्र ज्ञान का अवलंबन आवश्यक है। विधान के अनुकूल ही विचार कर आचरण आवश्यक है।

(दो) ध्यान रहे, विचार शुद्धि से आचरण शुद्ध होता है, शुद्ध और पवित्र आचरण ही धर्म है। यही पुरूषार्थ का मर्म है। पुरूषार्थ स्वयं में व्यक्तित्व का विकास तो करता ही है, जीवन के संस्कार और समाज की कार्य संस्कृति को प्रदर्शित करता है।

(तीन) कार्य संस्कृति में, दुष्कर्म व कुकर्म, कर्म के नकारात्मक पक्ष है। सत्कर्म व सुकर्म कर्म के सकारात्मक पक्ष है। सुकृति करे। विकृति से बचे। किसी कृत्य का अपराध कर्म होना, कानून से तय होता है।

(चार) कानून के अन्दर राष्ट्र की, व्यक्ति की अपनी-अपनी नीति होती है। नियति होती है। रीति होती है। करने मे कानून से,धर्म से प्रेरणा ग्रहण करें। सिविल सोसाइटी/समाज से सांमन्जस्य बिठाये। सार्वजनिक नीति का भी पालन करे। स्वयं की पौरूपता का प्रदर्शन करे।

निष्कर्ष रूप में पुरूपार्थी और प्राणवान के लिए असंभव कुछ भी नही है। (नथिंग इम्पासिबल फार करेजियस एण्ड इनरजेटिक मैन)

ऊँ स्वस्तिम् भवन्तों।

तृतीय अध्याय

धर्म

(राइट कन्डक्ट)

1. धर्म कर्तव्य, कर्म, स्वभाव आचरण, सच्चरित्रता सुखः शांति मानवता मानवीय संबन्धों का बोध करता है। कार्यो में धार्मिक पुट इसिलिए दिया जाता है। कि ईश्वर से प्रेरणा ग्रहण करे। विश्वास रखे। आस्था रखे। सफलता और शांति मिले। धर्म कर्त्तव्यम/अकर्त्तव्यम को भी बताता हैं। शास्त्र सम्मत विचार देता है। समाज में विधि विधान के अनुरूप आचरण करना होता है। मानव स्वभाव में तो धर्म संस्कार डालता है। मानव आचरण में तो धर्म सच्चरित्रता का निर्देश देता है। हिंसा से दूर रहकर शांति का मार्ग प्रशस्त करता है। दुख दूर करने की सहनशक्ति धर्म ही देता है, सुख प्राप्त करने की आशा को धर्म बल देता है। मानव का मानव से, मानव का प्रभु से, मानव का जगत से, मानव का ब्रह्म से संबधों को धर्म ही बताता है, निरूपित करता है, व्याख्या करता है। संक्षेप में जीव, जगत, ब्रह्म (अर्थात ईश्वर) के संबधों की ज्ञान व बोध धर्म कराता है। ईश्वर के रूप में सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान सत्ता का भय दिखाकर बदी से नेकी के मार्ग में, अशुभ से शुभ कर्म की ओर प्रेरित कर धर्म ने महानतम कार्य किया है। मानव आचरण/कर्म, धर्म है जिसमें श्रेष्ठ को ग्रहण करते है तथा नेष्ठ को नकारते है।

2. धर्म की नियामक सत्ता "ईश्वर" "प्रभु" "भगवान" "विधाता" "गाड" " खुदा" "प्रकृति और पर्यावरणिय सत्ता" "जगतनियंता" "ब्रह्म" है। धर्म स्वयं में नियम, नीति विधान है। यह नियम "जीव" के लिए है। "जगत" के बारे में है।

ब्रह्मांड के चार प्रधान अंग हैं

(1) ब्रह्म (2) जगत (3) जीव (4) धर्म है।

ब्रह्म द्वारा जीव जगत के संचालन का नियम धर्म हैं। इन नियमानुसार कर्म करना मानव धर्म है।

3 ब्रह्म सत्यमः–"हिरण्यगर्भ समवर्तताग्रे"–ऋगवेद 10–121–1 (इन दी विगनिंग–गाड इज फस्ट आफ आल) सृजेता परमात्मा ही हो सकता है। जो स्वयंभू है। "एकोहम बहुस्यामि"। वह अकेला अनेकों को

बनाया होगा। प्रथम मानव निश्चय ही विश्वरूप विष्णु/ब्रह्म/ईश्वर को निगमित करना होगा/ तभी आगे का शेष संसार आगमित होगा। निगम से आगम की समझ बुद्धि और व्यवहार दोनो में ग्राह्य लगती है। यही नियंता है।

4 जगत सत्यम:– "एको विश्वस्य भुवनस्य राजा"–ऋगवेद 6–36–4 (गाड इज मास्टर आफ दी वर्ल्डस) ईश्वर से, प्रथम मानव से जीवन श्रृंखला जारी रहने के लिए प्रकृति पर्यावरण जगत का होना आवश्यक है। संसार को नकारा नही जा सकता है। इसी में सबका आगम है। अस्तित्व है। पहचान है। नाम है । यही नियति है।

5 जीव सत्यम (जन्म–मृत्यु–सत्यम्):– "अथातो ब्रह्म जीज्ञासा, जन्माद्यस्य यत:, शास्त्रयोनित्वास्, तन्तु समन्वयात"–ब्रह्म मीमांसा। ईश्वर अंश जीव अविनाशी –तुलसीदास। ब्रह्म व जगत की प्रतिपादना के पश्चात, निगमन के पश्चात, आज का आगम, आज की वास्तविकता जीव है। जीवों में श्रेष्ठ मानव है। मानव की श्रेष्ठता और संस्कार के बिना वसुंधरा की कृति, वनस्पति जगत, प्राणी जगत, पदार्थ और उर्जा तथा उसका रूपान्तरण, समय और क्षेत्र के साथ वृद्धि–ह्रास, सांसारिक सौन्दर्य अधूरा है। यही संसार है।

6 धर्म सत्यम:– सत्यम्वद्, धर्म चर।(तैतरिय उपनिषद 1–11,11) सांसारिक सौन्दर्य को बनाये रखना, सजाना, सवांरना मानव का ध्येय और धर्म है। क्या संसार को रोशनी का बल्व देने वाला, बेतार से बात करने वाला यन्त्र बनाने वाला, किसी धार्मिक नेता से कोई कमतर, उसका धार्मिक योगदान है। उपर्युक्त प्रतिपादना श्रेष्ठ जीवन हेतु प्रतिपादित की गयी है धर्म के दश लक्षण मनुस्मृति का निम्न श्लोक बताता है –

घृति:, क्षमा, दमन, अस्तेयं, शोचम्, इन्द्रिय निग्रह:।

धी, विद्या, सत्यम्, अक्रोध: दशक धर्म लक्षणम् । (मनु, धर्म के दशागं/इसेन्सियल आफ धर्म)

धर्म के दशांग निम्न है–

1. पेशेन्स– धैर्य
2. फोरगिवनेश– क्षमा

3. टेनक्वालिटी– दमन/संतोष

4. नाट स्टीलिंग– अस्तेय/चोरी न करना

5. होलिनेश– शौच/पवित्रता

6. कन्ट्रोल ओवर आर्गन आफ सेन्स– इन्द्रिय निग्रह/स्वनियन्त्रण

7. इन्टेलिजेन्स– घी:/बुद्धिमतता

8. कैपेवल आफ अण्डर स्टैडिंग गुड आर बैड/एजुकेशन–विद्या/ज्ञान

9. ट्रुथ–सत्य

10. फ्रीडम फ्राम ऐंगर–अक्रोध

धर्म के चतुष्पाद निम्न है–

पहला भारतीय संविधान का मूलकर्त्तव्य इसी से मेल खाता है। कर्त्तव्यम्/अकर्त्तव्यम् धर्म है।
यथा योग्यम् तथा कुरूं।
यथा कर्मम् तथा फल्म।

दूसरा मूलाधिकार की यही नींव है। करणीय/अकरणीय धर्म है। धर्म को धारण करने से शोर्य, यश, पुरूषार्थ की प्राप्ति होती है और यही धर्म समाज के सुचारू संचालन की श्रेष्ठ रीति नीति है।

तीसरा "धर्मो रक्षित रक्षत:"– धर्म उसकी रक्षा करता है जो धर्म की रक्षा करता है अर्थात धर्माचरण करता है कहीं भी यदि धर्म की हानि हो कोई भी करे, चाहे शासक हो, शासित हो, श्रेष्ठ जन हो, दुराग्रह से ग्रसित होकर अधर्म, विधर्म करते है तो धर्म को वचाना , शहादत देना, संकट झेलना, प्रकरान्तर से धर्म की रक्षा करना ही है।

चौथा याद रहे, धर्म सही–गलत (रांग–राइट) को बताता है। उसकी परख करे। परीक्षण करें। वहकावे में, भुलावे में न रहे। सामान्य शिष्टाचार एवं शुद्धव्यवहार–धर्माचार है, ध्यान रहे। (जनरल प्योर करेक्टर एण्ड प्योर विहैवियर इज रेलिजियर राइट–मैटर आफ अटेंशन)

धर्म दिवस– गुरूपूर्णिमा के दिन मनाएं।

ॐ कल्याणम्/ॐ श्री: अस्तु।

चतुर्थ अध्याय

कर्म (काम)

(राइट डिजायर)

1. कर्म–स्वास्तिक (卐) स्वास्तिवाचन, शुभ, अशुभ कर्म विचारः

कार्य आरम्भ में स्वास्तिक चिन्ह 卐 बनाते है। जिसका अर्थ है – "स्वास्तिक सर्वतो ऋध्द" – अमर कोश। अर्थात सर्वत्र सभी दिशाओं में कल्याण होवे। ये चार भुजाये चार वर्ण, चार युग, चार आश्रम और चार प्रतिफल (धर्म, अर्थ, काम, मोछ) का परिचायक है।

सारे देवों का मूल ओंकार "ॐ" है, स्वास्तिक । 卐 । में । ॐ । है।

स्वास्तिवाचन–कर्म का आदर्श याचन । 卐 ।

क. "स्वास्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवा" :–

पहली भुजा इन्द्र को समर्पित है, (कर्म का मनोविज्ञान है)

ख. "स्वस्ति न पूषा विश्ववेदा" :–

दूसरी भुजा वेदों को समर्पित है, (कर्म का ज्ञान है)

ग. "स्वस्ति न रक्षयों अरिष्ट नेमि" :–

तीसरी भुजा आपदाओं से मुक्त्ति के लिए है (कर्म की सुरक्षा नीति राजनीति है)

घ. "स्वास्ति नो वृहस्पति दधातु" :–

चौथी भुजा गुरू वृहस्पति को समर्पित है। (कर्म की व्यवहारिक व्यवस्था, समाज व्यवस्था, अर्थव्यवस्था है)

कर्म की प्रेरणा का मूल स्त्रोत या तो धर्म वोध से या तो आवश्यकता से शुरू होती है। किन्तु समाज की अपनी गति है। समाज के संचालन एवं सुशासन के लिए व्यवस्था (स्व या वाह्य नियमन) का होना अपरिहार्य है। शुभ और अशुभ का ध्यान देना आवश्यक है।

शुभ और अशुभ कर्म

शरीर और मन जिन कर्मो का स्वाभाविक इच्छा, आकांक्षा की भूख प्रकट करती है उनमें जो शुभ है वे निम्न है (1) आरोग्य (2) ज्ञान (3) भूख (4) सौन्दर्य (5) धन (6) कीर्ति/पहचान (7) विवाह (8) आत्म–सम्मान,आत्म गौरव ।

शरीर और मन जिन कर्मो का अस्वाभाविक इच्छा की भी

कभी–कभी अपनी भूख प्रकट करती है उनमें जो अशुभ है वे निम्न है (1) लोभ (2) क्रोध (3) कामुकता/व्यभिचार (4) मद/दंश (5) अहंकार/अन्याय (6) चोरी (7) हिंसा (8) छल/अनिति

शुभ कर्म से, पुण्य कर्म से, आत्मसुख का लाभ होता है, अशुभ कर्म से, पाप कर्म से, शरीर सुख की प्राप्ति होती है। विवेक बुद्धि कहती है कि क्षणिक सुख/ लालसा/तृप्ति की अपेक्षा स्थाई सच्चे आत्म सुख को प्राप्त करे। ''परोपकाराय पुण्याय, पापाय पर पीड़नम – व्यास। अर्थात परोपकार पुण्य है और दूसरों को दुख देना पाप है।

2 मौलिक कर्म :– मानव की मौलिक आवश्यकताए आहार, निद्रा, मैथुन और प्राण रक्षा है। आवश्यकता–अस्तित्व उन्नति के अन्तर्गत तीन मौलिक कर्म है।

पहला — आत्म रक्षा करना, सुरक्षा कर्म ताकि जीवित रह सके।

सुरक्षा कर्म:– हरेक व्यक्ति को अधिकार है कि वह स्वयं अपनी तथा दूसरों की शारीरिक, साम्पत्तिक सुरक्षा करे। आतंक हिसा का प्रतिकार करे ।(भारतीय दण्ड संहिता, धारा 96)

दूसरा — शारीरिक काम–सुख की प्राप्ति, यौन या जनन कर्म ताकि जीवन श्रृंखला बनी रहे।

काम सुख:– हर एक स्त्री–पुरूष को अधिकार है कि यौन या जनन कार्य अपनी इच्छा से करे, विवाह, करे परिवार बसाये, बलात करने वाला दण्डित होगा और वह उसकी जान तक ले सकेगी (भारतीय दण्ड संहिता धारा 103 व 376)

तीसरा — उन्नति, आनन्द, सुख प्राप्त करना ताकि जीवन गतिमान रहे । उन्नति हेतु शुभ–लाभ, रिद्धी(कल्याण)– सिद्धि (संतुष्टि), शुद्ध व्यवहार–कर्म सिद्धान्त :–

प्रत्येक व्यक्ति के कार्य के बदले, प्रति कार्य, उपकार के बदले प्रति उपकार लेनदारी के बदले में देनदारी, काम के बदले प्रतिफल दे, प्रतिपूर्ति करें, क्षतिपूर्ति करें। (भारतीय

संविदा अधिनियम धारा 10 व 23)

3 कर्म विधि:- कर्म की विधियाँ, विधान, संविधान, वर्करूल, प्रोसिजर होते है। जो कर्मो के शुभ, अशुभ को बनाते है। प्रक्रिया बताते है। व्यवस्था देते है। जिन्हे जानना आवश्यक है। उसी के अनुसार करना बाध्यता है। किन्तु मूल रूप में कर्म की स्वतंत्रता को बाधित नही किया जाता है। प्रतिबन्धित नही किया जा सकता है। सबको समान अवसर उपलब्ध कराना राजनीतिक, आर्थिक, संवैधानिक, सामाजिक उत्तरदायी कर्म है ताकि मनुष्य के अनेकानेक कर्तव्य निभ जाय और वह व्यैक्तिक उपलब्धिता हासिल कर सके। विधान, संविधान कर्म विधि का विस्तार देते है।

4 कर्म ज्ञान कौशल:- आधुनिक समाज में मनुष्य को विभिन्न क्षेत्रों में स्पेशलिस्ट कर्म करने का अवसर व ज्ञान हासिल है। चिकित्सा कर्म, तकनीकी कर्म, विधिक कर्म, प्रबन्ध कर्म, वैज्ञानिक कर्म, राजकर्म आदि ऐसे कर्म है जिनकी विशिष्टता का लाभ लिये बिना मानव जीवन मुश्किल में फस जायेगा। ज्ञान शून्य कर्म और क्रिया शून्य ज्ञान व्यर्थ है।

5 कर्म श्रेष्ठतम्:- वेदो में मनुष्य को श्रेष्ठतम कर्म करते हुए सौ वर्ष तक जीने की इच्छा करने वाला बताया गया है। और इसके लिए पवित्र आचार-विचार और व्यवहार वाला जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी गयी है। पौरूष करना, यह पुरूष का स्वाभाविक धर्म है।

6 कर्म फल:- जहां कर्म है, हर परिस्थिति में समभाव दृष्टि है, धर्म है, नैतिकता है, शिष्टाचार है, सामाजिक सद्भाव है, व्यवस्था है, स्वनियमन है, उद्यम, पराक्रम, धैर्य व साहस है, सुख वहीं है, दुख वहां ठहर नही सकता है। आप, भाषा पर नियन्त्रण रखे (माइन्ड योर लैंग्वेज) आप अपनी कार्य संस्कृति में करणीय और अकरणीय, सही और गलत की मर्यादा का ख्याल करे (लुक डू एण्ड डोन्ट इन योर वर्क कल्चर वेदर रांग आर राइट)। शुभम् अस्तु। ॐ कर्म समृद्धिरस्तु। ''कर्म दिवस'' शिवरात्री के दिन मनाये।

पंचम अध्याय

अर्थ

(राइट वेल्थ)

न अभाव यतः शांति, शान्तस्य कुतः सुखम्। (गीता श्लोक 66 अध्याय 2)

1 अर्थ महत्ता – भौतिक उन्नति के लिए अर्थ प्रधान है। अर्थोपार्जन पुरूषार्थ है। अर्थ ही तो है जिससे संसार चलता है बाकी तो व्यर्थ है। धन के विना हमारा काम नही चल सकता है। धन जीवन यापन की जरूरत है। इच्छा पूर्ति का साधन है।

परन्तु मेरे पिता स्व० फूलचन्द देव का कथन है कि धन की तीन गति है।

(क) उपभोग करे (ख) चोर या अन्य उठा ले जाये (ग) नष्ट हो जाय।

देखों पुत्र, लक्ष्मी पूजा यही है कि धन का सदुपयोग रोजगार सृजन और दूसरे के जीवन यापन का अवसर देने में व्यय करों।

परन्तु मेरी माँ स्व० राममूर्ति देवी का कथन है कि (क) धन को हम पवित्र उद्देश्यों से कमाये और (ख) पवित्र उद्देश्यों में ही व्यय करें। देखो पुत्र, कुबेर पूजा यही है कि धन सही ढंग से कुबेर (बिना बैर) प्राप्त की जावे। अपराधी कितना भी धनी क्यो न हो जाय वह न तो धन का सही उपयोग कर सकता है न ही वह धन दूसरों के काम आ सकता है।

तथापि मित्रो, अर्थ की प्राप्ति सामान्यतः सेवा से अथवा सम्पत्ति से होती है। सेवा का, सम्पत्ति का सदैव सम्मान करना आवश्यक है। धन से धर्म व सुख प्राप्ति होती है। अर्थ ही जीवन के संशाधन उपलब्ध करते है। अर्थ पर अधिकार आवश्यक है।

(2) अर्थ नीति– प्रथम अर्थ नीति है कि व्यवहार की "शुचिता का नियम" पालन करे। दूसरी अर्थ नीति है कि "शुभ–लाभ का नियम"

पालन करे। तीसरी अर्थ नीति है "रिद्धि(कल्याण)-सिद्धि (संतुष्टि) " है। संसार की सम्पत्तियां सबकी है सभी मिल बांटकर खाये, कोई भूखा न रहे।" चौथी अर्थ नीति है "बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय" है। सामाजिक, राजनीतिक और मार्केट की शक्तियां अर्थ को इस प्रकार वितरित व व्यवस्थित करे कि राज-नीति अर्थात अधिकतम लोगो को अधिकतम सुख" मिल सके तथा अर्थ-नीति अर्थात अर्थोन्नति होती रहे। समाज-नीति अर्थात"समाजोन्नति के बगैर धन का सही उपयोग नही हो सकेगा। संक्षेप में व्यक्तिनीति अर्थात "लाभ और उसका उल्टा भला" एक दूसरें में सपरिवर्तित होते रहते है। भला करे। लाभ ले। धन कमाये। मार्केट-नीति अर्थात "कम मुनाफा, अच्छा माल सदव्यवहार" ही बाजार/व्यापार का गुप्त सिद्धान्त है।

(3) अर्थ-लाभ- अर्थ का लाभ तो सिर्फ कर्म के मूल्य के रूप में मिलता है अथवा संम्पत्ति के क्रय-विक्रय अन्तर मूल्य के रूप में हासिल होता है। लाभ अच्छा है। लोभ बुरा है। व्यक्ति की कीमत उसके द्वारा की जा सकने वाली कार्यो/कर्मो/सेवायें का मूल्य ही तो है धन के रूप में उसकी कीमत उसके द्वारा दी जा सकने वाली उपयोगिता/यूज का मूल्य है जिसका हकदार है। सम्पत्ति की कीमत, उसकी उपयोगिता है। "शुभ-लाभ" कर्म का फल है। आर्थिक कर्म में प्रत्येक कार्य/लेन-देन में प्रतिफल आवश्यक है। (धारा 10 भारतीय संविदा अधनियम)

(4) मानव संशाधन- मानव सेवा देता है, सेवा (सर्विस) की कीमत मिलती है। धन कमाये/निठल्ले न बैठे/लक्ष्मी उद्योगी पुरूष की दासी है। दरिद्रता से छुटकारा पाये। कमाई करने में बेइज्जती न समझे, योग्यता पर विश्वास करे। उपार्जन करे। परिश्रम बढ़ाये। मितव्ययी बने। श्रम से वस्तु मिलती है। वस्तु से वस्तु बढ़ती है। योग्यता से उपार्जन करना यह सिंह वृत्ति है और पराश्रित होकर पेट भरना श्वान वृत्ति है। गुरू नानक ने

कहा है कि मनुष्य को इस प्रकार की विचार व क्रिया पद्वति पर अमल करना चाहिए कि वह स्वयं के परिश्रम से नैतिकतापूर्वक जो कमाये, उसी के अनुरूप जीवन चलाये। अन्धाधुंध अर्जन से अत्याचार पूर्ण कार्य होगा। क्षति होगी।

(5) प्राकृतिक संसाधन–वस्तुओं का मानव उपभोग करता है। वस्तुओं (गुड्स) की कीमत होती है क्योकि वे उपयोगी है। उपभोग की जाती है। गुणहीन (डिफेक्टीव) होगी तो कीमत कम होगी, गुणकारी (क्वालिटी) होगी तो कीमत अधिक होगी। हालाकि कौन कितना उपयोगी है यद्यपि यह धन मापने का पैमाना है तथापि अन्य अनेक ''मार्केट के कारक'' भी होते है। फिर भी संमृद्धि दूसरी वस्तुओं/व्यक्तियों के विनाश की कीमत पर न हो।

(6) अर्थ–प्रबन्धन/श्रम प्रबन्धन/सम्पत्ति प्रबन्धन पर शास्त्रीय विचारः– प्रबन्ध क्षमता अच्छी हो तो, थोड़े से साधन–सम्पत्ति से आगे बढ़ा जा सकता है। हरेक व्यक्ति, संस्था, संगठन को समृद्धि और सुख प्राप्त करने का अधिकार है। क्षमता प्रदर्शन का अवसर उपलब्ध है।

व्यक्ति उँचा उठे, समृद्धि प्राप्त करे, ऐश्वर्य प्राप्त करे, भोग करे, संसार का आनन्द उठावे, इसी के लिए उसे जीवन मिला है। वह भगवान का राजकुमार है। जीवों में श्रेष्ठ है। उसे हाथ – पाव, बुद्धि – विवेक मिला है उसे कमाने से रोकना मानवीय क्षमता को नष्ट करना है। भारतीय परम्परा में, आप ''शुभ–लाभ ले'' (टेक राइट गेन)। आप ''सदोष लोभ को छोड़े'' (विथड्रा रांगफूल गेन)।

धन समृद्धि दिवस–दीपावली के दिन मनाएं।

ॐ अर्थ समृद्धिरस्तु।

पष्टम् अध्याय

मोक्ष/मुक्ति

(राइट एक्जिट/लिवरेशन)

☆ "कामना ही बंधन है जो कामना के बंधन से छूट जाता है ईश्वरानुभूति करने में समर्थ हो जाता है"–महाभारत शांति पर्व में

☆ "आत्मानो मोक्षार्थ जगत द्विताय च"–विवेकानन्द

☆ प्रेम ही जीवन है देखे–

"जननी, जनक, बंधु, सुत, दारा (पत्नी)

तन धन धाम (आवास) सुहृद (मनोनुकुल) परिवारा" तुलसीदास

☆ प्रेम ही सृष्टि का आधार देखें–

सत् +चित् + आनन्द = सच्चिदानन्द (हरि ॐ तत् सत)

सत्यम् + शिवम् +सुन्दरम = परमानन्द (ॐ नमः शिवाय)

भू (अग्नि)+भुवः (वायु)+स्वः (आदित्य)=ॐ भूर्भुव स्वः(गायत्री)

ऋक (महाकाली) + यजुः (महालक्ष्मी) + साम (महासरस्वती)

= ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे (दुर्गा, मातृशक्ति जगदबां)

कर्म (ड्यूटी)+आस्था (डिवोशन)+ ज्ञान (नालेज)

= गीता (कृष्ण वन्दे जगतगुरूम) (विष्णु, पितृशक्ति श्री हरि)

☆ श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे। हे नाथ नारायण वासुदेव।।

☆ प्रेम ही राधा। प्रेम ही कृष्णा।।

रे मनवा प्रेम जगत का आधार।। –सूरदास

☆ हरे कृष्ण, हरे कृष्ण। कृष्ण, कृष्ण हरे हरे।।

हरे राम, हरे राम, राम, राम हरे हरे।। –चैतन्य प्रभु

☆ ढाई आखर प्रेम का। पढ़े सो पंडित होय।। –कबीरदास

☆ प्रेम ही भक्ति, प्रेम ही शक्ति, भक्ति से मिले भगवान (भक्ती से मुक्ति)।

☆ प्रार्थना करे "ईश मेरा मन आप में लगे"।

(1) मोक्ष क्या है ? :-वह अवस्था है जहां जीव अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानकर आनन्द या पूर्ण आनन्द की स्थिति में रहता है। मोक्ष किसका ? शरीर तो मरण धर्मा है, खाक में मिलेगी। आत्मा तो अमर है, उसकी मुक्ति संभव नहीं। मन की ही मुक्ति होती है। वो भी वासना से मुक्ति होती है। विषय अनुराग समाप्त करे। अनाशक्ति रखे। मोक्ष की अनुभूति होगी।

(2) बन्धन से मुक्ति आवश्यक है ?:- जीवन जीने में बाधाये व बन्धने रहेगी तो जीवन का लक्ष्य मुक्ति व मोक्ष हासिल नही होगा। मुक्ति बोध का विषय है, शोध का विषय है, अनुभव का विषय है, जब बन्धनों/बाधाओं से पार पा लेगें। स्वतंत्रता, समानता, भातृत्व के वातावरण में रहेगें। शोषण से मुक्ति पा लेगे, मन प्रफुल्लित होगा। आनन्द ही आनन्द होगा। जीवन की इच्छायें/आकांक्षाये पूरी हो गयी होगी। संतोष आ गया होगा। त्याग व वैराग्य उत्पन्न हो गया हो। तृष्णा मर गयी होगी। मन सही दिशा और दशा में सोचेगा। राग द्वेष समाप्त हो गया होगा। दुख दूर हो गया होगा। आगे इन सबके बाद तो सुख ही सुख नजर आयेगा। आनन्द परमानन्द में बदलता जायेगा। आप मन को साथ लेकर, शरीर को साध कर, आत्मा के अनुरूप चलेगें तो आनन्द ही आनन्द है। मुक्ति है,मोक्ष है। प्रभु से मिलन है। इन्ही क्षणों में मन, चेतन (सोच कर करने वाला) व अचेतन (स्वतः निर्देशित) मोक्ष की ओर मुड़ता है। दानव से मानव, मानव से देव और आगे परमात्मा तक का अनुभव करता है।

(3) मनुष्य कौन है ?:- महत्वाकर्माणि सौम्यति इति मनुष्यः। जो सोच विचार कर कार्य का संपादन करता है। शुभ कर्म करता है।

(4) राक्षस कौन है ?:- जो बिना विचारे उल्टा पुल्टा कार्य का संपादन करता है वो राक्षस है। छीना-झपटी करता है। कष्ट देता है। अशुभ कर्म

करता है।

(5) देवता कौन है?:- जो परहित का कार्य करता है वो देवता है सदा देता रहता है। मानवता की रक्षा करता है। मानवीय सहायता करता है।

(6) मोक्ष कैसे सभव है?:-जहां परमात्मा और पुरूषार्थी एक साथ सक्रिय होते है वहा श्री (सम्पन्नता), विजय (सफलता) और विभूति (दिव्य गुण आदि) रहते है। वही मुक्ति है। आप जीवन का पूर्ण आनन्द ले, लुत्फ लेवे, (फुल इन्ज्वायमेन्ट योर लाइफ)। परमानन्द की ओर, मोक्ष की ओर वढ़ते चले जायेगे। यही अध्यात्म का विज्ञान एवं मनोविज्ञान है जिसमें थोड़ी से उपासना, साधना, आराधना, प्रार्थना है जिसमें थोड़ा सा मन की दिव्य चक्षु (ऋक, यजु, साम-नेत्र) खोलना है। शरीर को पावन रखना है। शुभ कर्म में रत रहता है।

आनन्द उत्सव दिवस-होली के दिन मनायें। ईद व क्रिसमस के दिन भी मनायें।

ॐ श्रीः अस्तु। ओम तत् सत्।

हमारी धार्मिक नारायें और हमारी धार्मिक परिचर्यायें

(1) अधर्म और अज्ञान का नाश हो (नालेज पावर)

जब व्यक्ति अशुभ कर्म करता है तो अधर्म होता है। ऐसा अज्ञानवश हो सकता है तो जानकर दोष का परिमार्जन करे, और यदि ज्ञान से करते है तो यह अनाचार, अत्याचार, अपराध होता है। आगे वह कानून की परिधि में लाया जाता है। कुछेक इतनी चालाकी से करते है कि वह कानून से भी बच निकलते है। उन्हे दण्डित तो जनता यदि कही पकड़ लेगी तभी सामूहिक दण्ड देगी अथवा भगवान ही उन्हे दंडित करेगा। अधर्म के विनाश से धर्म की स्थापना होती है। अपराधी–अधिकारी–अगुआ (नेता) का त्रिकोण शक्ति के मद में कुकर्म करता है। इस काकस पर हाथ साफ करना अनुचित नही है। जनता और नेता के लिए अलग–अलग न तो नीति है न नियम है न विशेषाधिकार है। इस अशक्तता का नाश हो। परन्तु आप जहां तक कर सकते हैं वही तक करे। स्वयं निर्णय ले यदि सशक्त हो तो संघर्ष का, यह भी अधर्म से धर्म स्थापना का कार्य है। स्वागत है।

धर्म का समानार्थक आधुनिक काल में विधि है। विधि से ही समाज संचालित है। विधि न्याय दिलाने के लिए है। न्याय विधि के अनुसार होता है। न्याय ही कमजोरो और वंचितो का जीवन रक्षा कवच है। संविधान निर्माता सबको न्याय की गारंटी देते है। विधि के हजारों लेख, विलेख, संहिताए है। जब तक हमारी संसद, विधायिका इन कानूनों में मौलिक कृत्यों/कानूनो को हाथ की अंगुलियों के संख्या में अर्थात पंचशील अपराध विधान, पंचकर्म व्यवहार विधान के रूप में, दस लक्षणों में सारत: जन सामान्य विधि सूत्र, न्याय सूत्र निरूपीत करने में असफल रहेगी तब जनता उन्हे जान ही नही सकती। यदि जान नही सकती तो कर नही सकती है। ऐसे में पालन की अपेक्षा करना मूर्खता है। सत्ता से हनक व झलक दिखला सकते है, लेकिन अधर्म व अराजकता का अन्त नही होगा। जब तक कि इसे अज्ञान के आवाज से बाहर लाकर, ज्ञान देकर जन जागरूकता न फैला दें।

(2) कुकर्म और अन्याय का अन्त हो (इन्ड आफ इनजस्टिस)

सत्कर्म–कर्म का सात्विक होना, मानव कार्य संस्कृति का बड़ा हिस्सा है। कुकर्म–कर्म का असात्विक होना मानव कार्य संस्कृति का छोटा (दो चार परसेन्ट) हिस्सा है किन्तु बलंट आवजेक्ट, दुष्ट, अशिष्ट, उदंड, स्तरहीन समाज में क्षोभ पैदा करते है। न्याय वहां होता है जहां व्यक्ति को जो मान सम्मान हक हकूक सम्पत्ति मिलनी चाहिए उसे मिल जाय और अन्याय वहां होता है जहां व्यक्ति को अपमान, सम्पत्ति का अपवंचन, अपहरण, भय, आतंक मिलता है। इसे दंडित कर न्याय दिया जा सकता है। न्याय का लक्ष्य अपराधविहिन सामाजिक परिस्थितिया निर्माण है।

कुकर्म, दुष्कर्म, दुराचार, अनाचार, अत्याचार, व्यभिचार, उत्पीड़न को महिमा मण्डन न करके, उसका प्रतिरोध करना प्राकृतिक धर्म है। प्रकृति पीड़ीत को प्रतिकार करने को प्रेरित करती है। कानून सुरक्षा का अधिकार देता है। समाज भी मदद करता है। आप उठ खड़े होवे। अनीति से लोहा लेवे। अन्याय का अन्त होगा। अन्याय के कारण ही राजा या राजव्यवस्था या न्याय व्यवस्था का जन्म हुआ है।

कर्म/कुकर्म का निर्णय तो कर्ता अपने मानदडों, क्षमता से करता है। बाद में समाज देखता सुनता प्रभावित होता है। उनके बाद कानून अपने मानदंडों मानको पर जांचता परखता है। पैमाना बहुत होने से दुविधा व हजारों कानूनों से परेशानी होती है ऐसा मैंने अपने अधिवक्ता व्यवसाय में अनुभव किया है कि अपराधिक और सिविल विधि में पंचशील, पंचव्यवहार का मानक ही पर्याप्त होगा। ध्यान रहे कर्म का मूल सिद्धान्त यही है कि कर्म/आचरण वेदाग और निष्कलंक हो तभी सुफल होगा अन्यथा कर्म विफल होगा। कानून और न्याय को काम करने देवे। आप भी कुछ कर सकते है तो करें। न्याय ईश्वरीय कार्य है। न्याय ही कमजोरो और वंचितों को जीवन रक्षा कवच देता है। अन्याय का अन्त हो।

(3) अनर्थ और अभाव का अन्त हो (इम्पावरमेन्ट)

अर्थकारी विद्या का अभाव है। अनर्थकारी युक्ति की बोलबाला है। निर्धनता है। अभाव है। मेरी पत्नी अनिता ने प्रश्न किया है, क्यो नही स्वच्छ सुन्दर स्वस्थ्य समृद्धि भारत बना है? कर्म की दुत्कार क्यों है? धनबल, बाहुबल, क्यो झुका देते ह? इसका उत्तर तो यही है कि निर्बल का सशक्तिकरण पहले आवश्यक है। अभाव का अन्त हो। वातावरण में सुधार होवे। भ्रष्टाचार, अनाचार, दुराचार, अवचार आदि कर्म के सुफल को विफल बना देते है। समकेतिक विकास करना होगा। सबको भागीदारी देनी होगी। मेरी पुत्री वैभवी ने प्रश्न किया है युवा तो समय, अवसर और क्षमता का उपयोग करने को तत्पर है। फिर भाग्य क्यों प्रभावित करती है? इसका उत्तर यही है, बिना प्रयास किये, बिना पुरूषार्थ किये, परिणाम की इच्छा रखना तो बिल्कुल दिवा स्वप्न एवं धोखा है। कर्म प्रधान विश्व की रचना है। एक–एक का भाग्य लिखने का समय भगवान के पास नही है। सबको समान बनाया है। जाति, धर्म, लिंग, भेद–बुद्धि, भ्रष्टाचार गलत है। मानव निर्मित है। अपने आप पाने की इच्छा करना, बुद्धि–कौशल–कर्म की अवहेलना है। मेरे पुत्र डा0 दिव्यज्योति ने कहा कि युवतियां युवको से कम नही है यदि थोड़ी बहुत शारिरिक क्षमता में कमी है तो सहनशीलता सृजनशीलता, लम्बे समय तक कार्य करने की क्षमता, उन्हे ही मिली है। देखिये, वंचितों को पिछड़ों को, अगड़ो से परेशानी हो सकती है। सशक्तिकरण आवश्यक है। अभाव में कष्ट होता है किन्तु विपरीत परिस्थितियों में बेहतर विकास भी होता है। आप सभी अभाव के अन्त में अपने–अपने स्तर से योगदान करे।

(4) बन्धन और विवसता से मुक्ति मिले (लिवर्टी)(फिडम)

बन्धन न हो, विवशतायें न हो, तो हर कोई उड़ान लगायेगा और अब तक की उपब्धियों को देखें और वर्तमान चतुर्विधि पुरूषार्थ की नई लिस्ट को पहचाने, समस्याओं से मुक्ति मिलेगी, फाइनेन्सिएल फ्रिडम का अनुभव होगा।

(1) विज्ञान–पदार्थ में अन्तर्निहित शक्तियों को खोजता है। उद्देश्य है सुविधाए बढ़ाना।

(2) ज्ञान–मस्तिष्क में अन्तर्निहित शक्तियों को जगाता है। उद्देश्य है – उपयोगी बनाना।

(3) कला–हाथ में अन्तर्निहित शक्तियों का अभ्यास कराता है। उद्देश्य है – निपुणता प्राप्त करना।

(4) धर्मचेतना–चेतना में अन्तर्निहित शक्तियों को, विवेक की शक्तियों को खोजता है। उद्देश्य है सुख बढ़ाना।

उपरोक्त सब एक दूसरे के पूरक है। पूर्ति कर्ता है। विन्यास है। अभिकल्प है। तथापि उपरोक्त सब को विना जाने समझे, परीक्षण किये, बन्धनों से और विवसताओं से मुक्ति नही मिल सकती है। मुक्ति हेतु कोई उपर से नही टपकेगा। सभी लोगो की नवोन्मेश नवाचार के कार्यो की प्रशंसा करनी होगी। उसे करने में सहयोग करना होगा। उसे स्वयं संपन्न करना होगा। बन्धन को स्वत: तोड़ना होगा। विवसताओं से लड़ने में पुरूषार्थ करना होगा। रास्ता बनाना होगा। ध्यान रहे कर्मयोगी का कर्म लोकमंगल भावना से "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय" होता है। ज्ञानयोगी का कर्म "स्वान्त: सुखाय" है। भक्तियोगी का कर्म "स्वान्त: हिताय" है। लेकिन सभी का लक्ष्य एक है मुक्ति। आप भी मुक्ति हेतु, स्वाधीनता हेतु, संघर्ष करे। यही सविता देव की प्रार्थना है। सवत्र मुक्ति मिले।

(5) पंडित, पुरोहितों के झूठे धर्म (कमुनल फाल्ट) तथा कर्मकाण्डो के जखीरो में से ढूंड निकले तत्व ज्ञान(नालेजिस्ट/साइनटिस्ट)-

धर्म को एक वृक्ष समान समझे। जिसमें मूल का महत्व है। शाखाओं और पत्ते महत्वहीन है। मूल रूप में धर्म स्वाभाविक कर्म है। अच्छे कर्म को ग्रहण करे। बुरे कर्म का परित्याग करे। यही सच्चा धर्म है। लेकिन धर्म के तथाकथित संचालक, संरक्षक, पंडित, पुरोहित, मौलवी, मुल्ला, पादरी आदि अपने अहं की पूर्ति, अपने फालोवर बढ़ाने, अपने को चमकाने, धन इकट्ठा करने में अनेकानेक युक्तियां लगाकर धर्म जो सच्चाई का पथ है, उसे झूठी दिशा की ओर मोड़ देते है। पोगापन्थी बुरा है। कट्टरपन बुरा है। योग गुरू रामदेव के शब्दों में वे धन हरण और विवेक शून्यता करके जनता की हानि शोषण करते हैं जो झूठा धर्म है। दंगा-फसाद भड़काते है, इनकी चालो को समझे, इसी में चतुराई है अन्यथा बर्बादी हैं। धर्म गुरू श्री राम शर्मा के शब्दों में धर्म स्वतः में वस्तु-व्यक्ति का नैसर्गिक गुण कर्म स्वभाव है। जिसे अन्तःकरण में धारण करे। कर्मकाण्ड तो पहुचने का साधन है जो सुविधानुसार बदल सकते है। धर्म ध्वज श्री आचार्य शंकर के शब्दों में धर्म का मूल तत्व है "शुभ कर्म बोध"। देखें हजारों धार्मिक पुस्तके छपी है। लाखों प्रवचनाकर्ता व पुजारी है किन्तु क्या यदि धर्म के मूल कार्य व सिद्धान्त पॉच दस सूत्रों से अधिक होगें तो जनता उन्हे याद कर पायेगी? जान पायेगी। यदि नही तो व्यर्थ है। उलझन है। धर्म पालन की अपेक्षा करना मुर्खता है। धर्म संसद बनाकर दस मूल धर्म बिन्दुओं को परिभाषित न कराकर जनता को धार्मिक मामलो में उलझाना धर्म का सबसे बड़ा अधार्मिक कृत्य है जिसकी भर्त्सना करते है। मै तो धर्म को जितना समझा, जाना, लिखा, पढ़ा सो किया, आगे आप करे। वास्तविक स्वरूप को सामने लाये। झूठ का पर्दाफाश करे।

(6) सच्चे धर्म की महायात्रा में शुभ संस्कार निर्माण प्रथम पड़ाव, श्रेष्ठ संस्कृति निर्माण अन्तिम पड़ाव (जर्नी आफ रेलिजन)

ब्रह्मांड बना/ग्रह बने/जीव बने/वनस्पति बनी/सभी अपने-अपने गति से गतिमान हुए/प्रथम मानव बना/पुरूष-स्त्री हुए/पुरूषार्थ मिला/ क्यों सब कुछ हुआ? सृजेता सृजन इसलिए किया कि यह उसकी स्वयं की इच्छा रही है। आगे वह सुन्दर ससुन्नत वसुंधरा चाहता है। समय-समय पर विकृतियों, अन्यायों, अधर्मो का नाश करता रहता है। आगे जब पृथ्वी पर हजार-दस हजार लोग हुए। तो उन्हे वह संस्कारित देखना चाहता है। धर्म की यात्रा शुरू हुई। वह जगह-जगह संस्कार-कुसंस्कार को देख-सुन रहा है। आगे बढ़ रहा हैं। धर्म कैसा दिखता है? धर्म कैसा हो? धर्म एक उल्टा वृक्ष के समान है। ऋषियों ने इसे इसी रूप में समझाया है जिससे संसारिकताए संचालित होती रहती है। धर्म समझने में उदाहरण के लिए पॉच गमले ले। समान मिट्टी भरे/पानी दे/प्रकाश दे/हवा दे/गर्मी दे। क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा का पंचतत्व दे। बीज रूप में लौकी, कोहड़ा (सब्जियाँ) धान, गेहू (अन्न), गेदा (फूल), डाले। कुछ दिन में देखेगे तो परीक्षण में मिलेगा। सुन्दर सा सब्जी, अन्न, फूल मिलेगा। प्रकृति तो समान है। उसी मिट्टी से विभिन्न चीजे मिली। फर्क तो बीज का है। किन्तु कमाल तो मिट्टी में है कि कितनी ही सुन्दर चीजे दी। धर्म (बीज/अंकुरण शक्ति) और धरा (मिट्टी सर्व पोषण पदार्थ) के मर्म को समझ कर धारण करे। उसी से शुरू करे। समस्त कर्मकाण्डों में षट्कर्म-"छव प्राथमिक कृत्य" सम्पन्न होते है।

1) पवित्रिकरण- शरीर की शुद्धि जल छिड़क कर करते है।
2) आचमन- अन्दर/अन्त:करण/आत्मा की शुद्धि जल पीकर करते है।
3) दिगन्यास- वातावरण शुद्धि, वादन से चुटकी बजाकरके।

4) रक्षा संकल्प– आत्म रक्षा/प्रकृति रक्षा/पर्यावरण शुद्धि गायन से, वाणी से व्रत लेकर के करते है।

5) पृथ्वी पूजनम– पृथ्वी पर जल छिड़क कर उसे माथे पर तिलक लगाते है। मंत्र देखे –

पृथ्वी! त्वया घृता लोका, देवि त्वं विष्णुनां घृता।

त्वं च धारय मां, देवि, पवित्रं कुरू चासनम्।

उपरोक्त कृत्यों में सुविधानुसार थोड़ा वहुत परिवर्तन हो सकता है किन्तु प्रत्येक धार्मिक कृत्य षटकर्म से शुरू करते है। संकल्प लेते है। विकल्प रखते है। यही धर्म कर्ता का मूल क्रिया है। शेष क्रिया पत्ते है। मूल यह है कि हम शुभ कर्म करेगे। संस्कारित होगे।

संस्कार कैसा हो? – संस्कार तो सोलह गिनाये गये है किन्तु चार प्रमुख है। जिसमें प्रधान देवशक्तियों/पंचदेवों शक्तियों यथा जगदम्वा, शिव–गणेश–विष्णु–सूर्य जिन्होने सृष्टि निर्माण पालन में महान योगदान किया है जिनका मन्त्र व श्लोक पूर्व में वर्णित है। अवसरानुरूप उनका, किसी एक का पूजन/अभिनन्दन/अभिशेख करते है। ताकि हम अच्छे संस्कारित हो जाये।

चारो संस्कार निम्न है :–

1) जन्म संस्कार – विस्तार जैसा भी करे किन्तु जिसका सार यह है कि बच्चे का उसके माता–पिता द्वारा संसार/पारिवारिक सदस्यों/मित्रों से परिचय एवं नामकरण।

एतदर्थ जगत–जननी व जगत–पुत्र, गौरी (जगदम्बा) – गणेश का पूजन, आशिर्वचन ले सकते है। सामूहिक जन्मदिन कृष्ण जन्माष्टमी (भादो कृष्ण पक्ष अष्टमी) को मना सकते है।

2) शिक्षा–स्वास्थ्य ज्ञान विज्ञान कला संस्कार–विस्तृत में जो चाहे सो करे किन्तु जिसका सार यह है कि वालक कैसे जीवन जीये। जीविका

चलाना सीखे। एतुदर्थ ब्रह्मज्ञान स्वरूपिणी – गायत्री का पूजन और आशिर्वचन ले सकते है। गुरू पूर्णिमा के दिन सामूहिक एजुकेशन डे मना सकते है।

3) विवाह घर–गृहस्थी संस्कार – धूम–धमाका जितना चाहे उतना मन भर करे किन्तु जिसका सार यह है कि वैवाहिक जीवन की शुरूआत विवाह करके, घर बसा करके, पारिवारिक सामाजिक दायित्वों के पालन का दम्पत्ति बचन देवे।

एतदर्थ प्रथम वैवाहिक दम्पत्ति, शिव–पार्वती का पूजन करें और प्रथम सद्गृहस्थ दम्पत्ति, विष्णु–लक्ष्मी आशिर्वचन ले सकते है। सामूहिक मैरेज डे माघ शुक्ल पक्ष पंचमी श्री राम सीता विवाहोत्सव तिथि पर मना सकते है।

4) अन्त्येष्टि संस्कार – गम को मिलकर बांटे और इसमें सार यह है कि जीवन के अन्त को समझे और यश और किर्ति को बढ़ाये और बांटे। यही शेष रहता है। बाकी खाक में मिल जाता है।

एतदर्थ पदार्थ रूपिणी पृथ्वी पिण्ड और शक्ति स्त्रोत सूर्य ग्रह का पूजन करे ताकि जीवनोपरान्त आगे की यात्रा बढ़े। ब्रह्म यज्ञ/गायत्री जप अर्पण करे।

पितृ विसर्जन के दिन सामूहिक पितर दिवस मना सकते है।

ये संस्कार तो सभी जानते है। मानते है। करते है। किन्तु मेरा जोर इस पर है कि इसे किस प्रकार करे कि ये आकर्षक लगे। सुरूचिपूर्ण होवे। जीवन जीने की शिक्षा भी मिले और बोझ भी न लगे। बाकी बाते जो इसके इर्द–गिर्द घूमती है वे व्यर्थ है। आगे भीड़ है। आप भी यात्रा करे। ठहरे नही। अब तो जनसंख्या 6 अरब पार कर गयी है। पॉच–दस संस्कृतियां/अपसंकृतिया पर फोकस कर यात्रा आगे बढ़ रही है।

सस्कृति/कार्य संस्कृति क्या है ?

जन सामान्य जिस ढ़ग से कार्य सम्पन्न करते है सामूहिक रूप में उसे संस्कृति कहते है। संस्कृति निर्माण में सामूहिक/ सामाजिक शक्तियाँ तप करती है। तप का सीधा अर्थ तपना है। तपस्वियों से जव मानवता लाभान्वित होती है तो संस्कृति निर्मित होती है। कार्य संस्कृति दिखती है। तप:पूत, तपस्वी दुविधा में हर कार्य सुविधा से करता है। आजादी दिलाने में गांधी ने अन्य तपस्वियों के साथ सत्याग्रह किया। अधिकारिता दिलाने में सुभाष ने अन्य तप:सेनानियों के साथ संघर्ष किया। प्रभु गौतम बुद्ध ने करूणा को पूरे एशिया में साधा और प्रभु महावीर ने अंहिसा को एशिया अफ्रिका तक साधा। प्रभु श्री राम 14 वर्षो तक वन में रहे और आसूरी शक्तियों को हराने के लिए तप किया। प्रभु श्री कृष्ण ने 18 दिनों तक महाभारत युद्ध में डटकर धन लोलुपता और लोभियों को धूल चटाने के लिए तप किया। भारत को महाभारत लगभग 1 लाख वर्ग किमी. का वनाया। देश काल परिस्थितियों के अनुरूप तप की विषय वस्तु बदल जाती है किन्तु तप और पुरूषार्थ की साधना चलती रहेगी। इसी से नई संस्कृति निर्माण होता है। कार्य संस्कृति बनती है।

धर्म की महायात्रा चलती रहेगी। महापुरूष वही होगा जो किसी वड़े,महान, वस्तु,कार्य करने को आगे बढ़ेगा। साधारण व्यक्ति तभी असाधारण बन जायेगा। क्या विद्युत खोजने वाला, इंजन वनाने वाला, टेलिवीजन वनाने वाला किसी राष्ट्राध्यक्ष, धर्माध्यक्ष से कमतर मानवता की सेवा किया है? क्या वह कम भगवत सत्ता पाया था? क्या वह कम ऐश्वर्य शाली हुआ? ऐसे अनेकानेक लोगो की धार्मिक, सांस्कृतिक, कलात्मक धर्म यात्रा यादगार रहेगी। धर्म की महायात्रा में शुभ संस्कार निर्माण तो प्रथम पड़ाव है किन्तु श्रेष्ठ संस्कृति निर्माण अंतिम पड़ाव है जहां पूरी मानवता लाभान्वित होती है। ओम स्वास्तिम् भवन्तों।

उपसंहार

मानव धर्म से, पुरूषार्थ से, संस्कार से, संस्कृति से, आत्म गौरव एवं श्री सम्पन्नता प्राप्त करता है। अधर्म से, निठल्लेपन से, कुसंस्कार से, अपसंस्कृति से अपमान एवं विपन्नता प्राप्त करता है। इसे नीति के रूप में, नियति के रूप में दृढ़तापूर्वक स्वीकार कर लिया जाय तो थोड़ा संघर्ष करना पड़ सकता है, किन्तु बाद में श्रेष्ठ संस्कृति, राष्ट्र, संसार बनने में देर नही लगेगी। देखिये दुर्योधन ने कृष्ण से यह कहा था कि प्रभु–"जानमि धर्म, न च प्रवृत्ते, जानमि अधर्म न च निवृत्ते"। क्या सही है, जानता हूँ किन्तु करता नही। क्या गलत है, इसे भी जानता हुँ किन्तु रोक नही पाता। जानते हुए भी सामान्य लोग ऐसा क्यो नही करते है। बात यहां यह आती है कि योग्यता को सही स्थान न देकर उस स्थान को अयोग्यता स्वयं हथियाना चाहती है। इसके लिए जोड़–तोड़–जुगाड़–पहुंच–पैरवी–जान तक लेने के लिए तैयार हो जाते है। हालाकि अयोग्य, पद पाकर भी कुछ प्रभाव नही दिखा सकता है। हजारों वर्षो तक सत्ता में रहने वाले कुल वंश जातियों में शायद एक दो ही यादगार और यशस्वी हो पाते है। सो ऐसी लोभ–लोलुपता को त्यागे। उचित का अनभल न करे, औचित्य को समझे। इसलिए प्रभु श्री कृष्ण ने दुर्योधन को बताया कि अधर्म से विरत और धर्म के रत रहने के लिए स्वभाव व संस्कार व परिवेश उत्तम होना चाहिए।

आप भी दृढ़ प्रतिज्ञ बने। नित्य कर्म को व्यवस्थित करे। सदा सत्कर्म में रत रहे। चरित्र चिन्तन व्यवहार शुभ रहे। अभ्यास करे। महामानवों की ओर देखे। दानवों से दूर रहे।

ब्रह्ममीमांसा–"अथातो ब्रह्मजिज्ञासा, जन्माद् अस्य यतः।
शास्त्रयों नित्वात्, तन्तु समन्वययात।"

ब्रह्म के प्रति प्रेम रखे। जीवन के प्रति आस्था रखे। जीवन को जीये। शास्त्रसम्मत कार्य करे। कार्यो में समन्वय रखे। आत्मोन्नति करे। धर्म कर्म है। कर्म ही धर्म है।

ॐ तत् सत्।

दीर्घ आयुः, शांति, पुष्टिः, तुष्टिः, श्रीः, यशो, विद्या, विनयो, वित्तं, बहुपुत्रं, बहुधनम्, आयुश्यम् च अस्तु।

(वेद प्रकाश श्रीवास्तव)

धर्म वा कर्म के चार स्तम्भ श्रीमुख से

1 विधायी विचार-नियतं कर्म कुरू

कर्म ज्यायो अकर्मणः, शरीर यात्रा न सिद्धयेद अकर्मणः

(गीता अध्याय-3 श्लोक - 8)

शास्त्रविहित (मानवीय कृत्य) कर्तव्य कर्म करो।

2 वैचारिक विचार - सुकृत कर्मणः सात्त्विकः निर्मलं फलम् ।

(गीता अध्याय-14 श्लोक-16)

श्रेष्ठ कर्म का सात्त्विक (सुखांत) व निर्मल फल है।

3 कार्यपालक विचार - अनिष्टं ईष्टं च मिश्रं त्रिविधं कर्मणः फलम्।

(गीता अध्याय-18 श्लोक-12)

कर्मों का अच्छा, बुरा और मिला हुआ तीन प्रकार का फल है।

4 न्यायिक विचार - कर्म, न्याय्यं वा विपरीतं।

(गीता अध्याय-18 श्लोक 15)

कर्म शास्त्रानुकूल या विपरीत होंगे ।

धर्म वा कर्म का विषय कर्तव्यम् वा अकर्तव्यम् क्या है? पढ़े!

धर्म